



याज्ञ वल्क्य स्मृति कालीन स्त्री शिक्षा

डॉ. नीलम

विभागाध्यक्ष संस्कृत-विभाग

बी.डी.एम.यू. गर्ल्स डिग्री कॉलेज शिकोहाबाद फिरोजाबाद

कु. कीर्ति

शोध छात्रा,

डॉ. बी आर अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

सामाजिक व्यवस्था तो प्राकृतिक सुषमा से परे मानवीय व्यवस्था एवं विचारों का संसार है, क्योंकि व्यवस्था एवं विचार के अभाव में संस्कृति की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती और इसके भी अभाव में आज मानव जीवन पाषाण से भी बदतर स्थिति में होता जा रहा है। बौद्धिक चेतना जागी, परिवेश बदला और एक निश्चित व्यवस्था के माध्यम से व्यक्ति व्यवस्थित हुआ। समाज के समुचित संचालन के लिए चातुर्वर्ण्य व्यवस्था की स्थापना हुई, जिसका ध्येय वस्तुतः व्यक्ति विभाजन न होकर कार्य विभाजन की भावना में निहित था। समय बदला, समाज की आवश्यकता बढ़ी जिसके कारण नित नये-नये नियमों एवं परिनियमों का अभ्युदय हुआ और ये नियम समाज में समावेशित होते गये। इन नियमों एवं परिनियमों के क्रमिक विकास की एक लम्बी श्रृंखला हमें आबद्ध रूप में वेदों, वेदों की शाखाओं एवं प्रशाखाओं, गृह्य सूत्रों, धर्मसूत्रों, पुराणों तथा स्मृतियों आदि में देखने को मिलती है। स्मृतियाँ तो समग्र जीवन की एक ऐसी संहिता हैं, जिसमें जीवन के सभी ऐहलौकिक एवं पारलौकिक अंशों की व्यवस्था निहित है। वस्तुतः ये स्मृतियाँ समाज की सामयिक आवश्यकता पूर्ति का माध्यम थीं, जिसमें समाज की सामयिक आवश्यकता को देखते हुए न केवल सामाजिक अपितु धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं अन्यान्य विषयों का विवेचन किया गया। वैदिक आधार के सन्दर्भ में देखा जाये तो वेदकालीन नियमों की जटिलता को समाप्त करना तथा सामयिक आवश्यकताओं को देखते हुए रुढ़ियों को नवीनीकृत स्वरूप प्रदान करना ही स्मृतियों का प्रमुख लक्ष्य था। यही कारण है कि याज्ञवल्क्य ने जिस सामाजिक व्यवस्था का प्रतिपादन किया है उसका आधार पूर्णतया वैदिक ही है। याज्ञवल्क्य स्मृति का समय प्रथम शताब्दी के मध्य संभावित रखा जा सकता है।¹ वस्तुतः देखा जाय तो इन स्मृतियों का मूल उद्देश्य लौकिक माध्यम से वैदिक ज्ञान का प्रसार ही करना था। वेदों और स्मृतियों के अनुसार धर्म का अनुसरण करने से सामाजिकों को परम आनन्द की प्राप्ति होती है –

श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठान् हि मा नव।

इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्।²

धर्मशास्त्रों में प्रतिपादित वैदिक ज्ञान की स्मृति से ही इन्हें स्मृतिसाहित्य कहा गया। यद्यपि स्मृतियाँ तो बहुत सी हैं, किन्तु मनुस्मृति एवं याज्ञवल्क्य स्मृति का प्राचीन भारतीय संस्कृति के आदर्शों एवं मूल्यों के प्रतिपादन और विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

स्मृतियों के सन्दर्भ में अगर स्त्रियों की दशा की चर्चा की जाए तो ज्ञात होगा कि किसी भी व्यक्ति अथवा समुदाय का स्तर उसकी शिक्षा के आधार पर ज्ञात किया जाता है। यहां भी हम स्त्रियों की दशा शिक्षा के स्तर से ही ज्ञात करेंगे।

स्मृतियों के काल में पुरुषों के ही समान स्त्रियों को शिक्षा प्राप्ति का पूर्ण अधिकार प्राप्त था। स्मृति-काल विधि-विधानों का काल था। मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन इन्हीं विधि-विधानों से बंधा हुआ पूर्णरूपेण अनुशासित तथा नियमित था। आचार्य मनु आदर व मान्यता के क्रम में धन, सम्बन्ध, आयु, कर्म, विद्या-इन पाँच को मान्यता देते हैं, जिसमें विद्या सर्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित है-

“वित्तं बन्धुर्वयः कर्म विद्या भवति पंचमी।
एतानिमान्यस्थानानि गरीयो यद्यदुत्तरत्।।”³

मनु की दृष्टि में मोक्ष की प्राप्ति विद्या तथा तप के द्वारा ही सम्भव है-

तपोविद्या च विप्रस्य निःश्रेयष्करं परम्
तपसा किल्बिषं दृन्ति विद्ययामृतमश्नुते।।”⁴

शिक्षा का प्रारम्भ उपनयन संस्कार से होता था, जो स्त्रियों के लिए औपचारिक रीति ही बनकर रह गया। विवाह को ही उनका उपनयन माना जाने लगा। आचार्य मनु स्त्री शिक्षा के प्रति उदासीन थे, यह तब स्पष्ट होता है जब वे कन्या के विवाह की आयु आठ वर्ष निर्धारित करते हैं। स्त्रियों को शुद्रवत् शिक्षा से वंचित रखने का विधान करते हैं। स्त्रियों के पाणिग्रहण संस्कार में ही मंत्रोच्चारण का विधान करते हैं, अन्य संस्कारों में नहीं-

नास्तिस्त्रीणां क्रियामन्त्रैरिति धर्मव्यवस्थितिः।
निरिन्द्रिया ह्यमन्त्राश्चस्त्रियोऽनृतमिति स्थितिः।।”⁵

विवाह काल में सुन्दर स्त्रियोचित गुणों से सम्पन्न आभूषणों से अलंकृत कन्यादान की बात कही गयी है लेकिन कहीं पर भी सुरक्षित कन्या की बात नहीं कही गयी है। नारी के लिए विवाह की अल्पायु अध्ययन के प्रति उदासीनता को द्योतित करता है। याज्ञवल्क्य स्त्रियों के सम्बन्ध में उदार माने जाते हैं लेकिन इन्होंने भी स्त्रियों के संस्कार को अमंत्रक ही बताया है।⁶ नारद और परासर जैसी स्मृतियाँ भी स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में मौन ही हैं। भृगुस्मृति तथा बद्धहारीति में शूद्रों तथा स्त्रियों के उपनयन व अध्ययन की व्यवस्था है। बद्धहारीति के अनुसार सदाचारी, सत्यशील आदि गुणों से युक्त ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र व स्त्रियों मंत्रों के पाठ की अधिकारी हैं-

“ब्राह्मणः क्षत्रियाः वैश्याः स्त्रियः शूद्रस्तयेः।
तस्याधिकारिणः सर्वे सत्यशील गुणायदि।।”⁷

भृगु स्मृति का कथन है कि बालकों एवं कन्याओं का उपनयन संस्कार पाँच वर्ष की अवस्था में कराकर उन्हें वेदाभ्यास करना चाहिए।⁸ इस प्रकार हम देखते हैं कि बद्धहारीति तथा भृगुस्मृति आदि कुछ अल्प स्मृति ग्रन्थों में ही स्त्री-शिक्षा की व्यवस्था अपवाद रूप में मिलती है। सामान्य रूप से दृष्टिपात करने पर स्मृति काल में नारी शिक्षा का ह्रास ही दृष्टिगत होता है। वेदों में स्त्रियों के लिए उपनयन तथा शिक्षा की सुविधायें दृष्टिगत होती हैं, जो स्मृतिकाल में बाधित हो गयी। इस महनीय परिवर्तन का मूल कारण है वेदों में नारी की स्वतन्त्रता को परतन्त्रता में बदलना। अनेक स्मृतिकारों ने बाल्यकाल से वृद्धावस्था तक स्त्री को पुरुष के अधीन कर दिया है, जिससे उनका कार्यक्षेत्र केवल घर गृहस्थी तक सिमटकर रह गया।

सम्भवतः विदेशी आक्रमण से समाज में व्याप्त असुरक्षा ने स्त्रियों की स्थिति को प्रभावित किया। कन्याओं का गुरुकुल में जाना बन्द हो गया एवं उनके स्त्रीत्व की रक्षा के लिए बाल्यकाल में ही उनका विवाह किया जाने लगा। स्त्रियों की अशिक्षा के कारण ही उन्हें शूद्र कोटि में रखा गया तथा पति सेवा ही उनका सर्वोच्च कर्म कहा गया—

लोकानन्त्यं दिवः प्राप्तिः पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः।

यस्मात्तस्मास्त्रियः सेव्याः कर्तव्याश्च सुरक्षिताः।।⁹

स्मृति ग्रन्थों के अतिरिक्त कौटिल्य अर्थशास्त्र में भी स्त्री को विपत्ति कहा गया है। विधवा, अंगहीन, प्रोषितभर्तृका के लिए सूत कतवाने, घरेलू कार्यों में नियुक्त करने के लिए प्रजा को निर्देशित किया गया है।¹⁰ याज्ञवल्क्य परिवारीजनों द्वारा वस्त्र, आभूषणादि द्वारा नारी सम्मान की बात करते हैं—

भर्तृभ्रातृपितृज्ञातिश्वश्रूश्चशुरदेवरैः।

बन्धुभिश्च स्त्रियः पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः।।¹¹

अर्थशास्त्र में स्मृतियों की तरह स्त्रीशिक्षा के प्रति नकारात्मक भाव है। स्मृतियों में तो नारीशिक्षा की अधिकारिणी बनी रही किन्तु वैदिक ग्रन्थों के अध्ययन से वंचित रखा गया। मनुस्मृति में स्त्रियों के उपनयन को औपचारिक महत्त्व प्राप्त था। शरीर की शुद्धि के लिए स्त्रियों के उपनयन आदि कर्म यथा समय यथा—क्रम मन्त्रोच्चार किये बिना ही करना चाहिए। स्त्रियों का वैदिक संस्कार उनका यथाविधि विवाह होना ही है। पति सेवा ही उनका गुरु—गृह में रहना और गृहकार्य ही उनकी अग्नि—परिचर्या है—

अमन्त्रिका तु कार्येयं स्त्रीणामावृद्धिशेषतः।

संस्कारार्थं शरीरस्य यथाकालं यथाक्रमम्।।¹²

वैवाहिको विधिः स्त्रीणां संस्कारो वैदिकः स्मृतः।

पतिसेवा गुरौ वासो गृहार्थोऽग्निपरिक्रिया।।¹³

याज्ञवल्क्य ने स्त्रियों के उपनयन का सर्वथा बहिष्कार किया है—

“तूष्णीमेताः क्रियाः स्त्रीणां विवाहस्तु समन्त्रक”¹⁴

जब स्त्रियों के उपनयन संस्कार बन्द हो गये तो उपनयन के अभाव में स्त्रियाँ वैदिक—शिक्षा की अधिकारिणी भी नहीं रहीं। उनका कार्यक्षेत्र सिमट कर घर के भीतर ही रहा। वे पुरुषों के समान गुरुकुल में रहकर शिक्षा ग्रहण करने से वंचित रह गयीं। मानव—शरीर में जो महत्त्व नाड़ी का है, समाज में वही महत्त्व नारी का है। स्त्रियों को गृहविज्ञान के शिक्षार्थ बाहर जाने की आवश्यकता नहीं थी। घर के भीतर ही उन्हें ये शिक्षायें मिल जाया करती थीं। सम्भवतः नारियों के लिए वैदिक—शिक्षा के महत्त्व को कम करने का यही कारण था। मनु आदि स्मृतिकारों के द्वारा स्त्रियों के लिए वैदिक—शिक्षा का विरोध करना कुछ दृष्टियों से उनके व समाज के हित में ही था। यह किसी द्वेष भावना से नहीं किया गया था। मनुस्मृति में ऐसा कहा गया है कि बालिका, युवती अथवा वृद्धा हो तो भी कोई गृहकार्य स्वतन्त्रता पूर्वक न करे। स्त्री बाल्यावस्था में पिता के, यौवनावस्था में पति के और पति की मृत्यु होने पर पुत्रों के अधीन रहे, स्वतन्त्र न रहे। पिता, पति या पुत्र से अलग रहने की कभी इच्छा न करें व अन्य किसी पुरुष को स्वीकार न करें क्योंकि ऐसा करने वाली स्त्री अपने पिता और पति दोनों के कुलों को निन्दित कर देती है।¹⁵ स्त्री सदा प्रसन्न रहकर गृह—कार्यों को दक्षतापूर्वक करें, सभी वस्तुओं को स्वच्छ रखे तथा धन का व्यय कम करें—

**संयतोपस्करा दक्षा दृष्टा व्ययपरांगमुखी।
कुर्याच्छ्वशुरयोः पादवन्दनं भर्तृतत्परा ॥¹⁶**

नारियों को साहित्य क्षेत्र में अध्ययन की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। अधिकांशतः साधारण परिवार की कन्यायें धन के अभाव के कारण शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकती थीं। शिक्षा के अभाव के कारण स्त्रियाँ पुरुषों से हीन हो गयीं। उनमें धर्म, अधर्म तथा ज्ञान का अभाव हो गया। कन्या दान के विषय में भी याज्ञवल्क्य ने कहा है कि पिता, पितामह, भ्राता, उस कुल का कोई व्यक्ति और माता से कमशः पूर्व के अभाव में तदुत्तरवर्ती प्रकृतिस्थ होने पर कन्यादान करने वाले हैं।¹⁷ कन्या को उचित वर को समय पर न देने वाला अधिकारी कन्या के प्रत्येक ऋतुकाल में भ्रूण हत्या के पाप को पूर्ण रूप से प्राप्त करता है। कन्यादान के दाताओं के अभाव में कन्या स्वयं उत्तम लक्षणों से युक्त वर का वरण कर ले।¹⁸ याज्ञवल्क्य स्मृति में पति के धन पर अधिकार, पुत्रों के साथ समान अधिकार जैसे विशेषाधिकार व स्त्रियों के प्रति हिंसा को गंभीर अपराध की श्रेणी में रखा गया है—

स्त्रीणां विवाहे यः कुर्यात् प्रतिरोधं सहासव¹⁹

उपर्युक्त विवेचनों से यहीं स्पष्ट होता है कि अति प्राचीन काल में (वैदिक काल) भारतीय नारियाँ उच्च वैदिक शिक्षा का लाभ उठाती थीं किन्तु स्मृति काल में उनके लिए वैदिक शिक्षा प्रतिबन्धित कर दी गयी, किन्तु साहित्यिक-ज्ञान, काव्य-रचना तथा अनेक कलाओं तथा शिल्पकारी में दक्षता प्राप्ति के लिए उन्हें पूर्ण अधिकार प्राप्त था। अथर्ववेद के एक मंत्र में कहा गया है कि स्त्री ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करते हुए शिक्षा ग्रहण कर योग्य वर को प्राप्त कर सकती है। वैदिक काल में अनेक विदुषी स्त्रियाँ ऋषि पद प्राप्त थीं, इनमें अपाला, घोषा, लोपामुद्रा, सिकता, निवावरी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार स्मृतिकार नारी शिक्षा के प्रश्न पर मौन हैं। अनुमानतः यह कहा जा सकता है कि कताई, बुनाई आदि विषयों में कन्यायें निपुण थीं। पुत्रों के समान कन्याओं के भी संस्कारों का अनुमान लगाया जा सकता है। पुत्र के सम्पूर्ण संस्कार वैदिक मन्त्रों के साथ होते थे लेकिन पुत्रियों के संस्कार अमंत्रक किये जाते थे। कन्याओं के विवाह संस्कार में ही वैदिक-मन्त्रों का विनियोग किया जाता था। परिस्थितिवशात् स्मृति-काल में स्त्रियों को वैदिक शिक्षा से वंचित किया गया था, इसीलिए बालक एवं बालिकाओं की शिक्षा में विभिन्नता थी। यदि बालकों की शिक्षा का उद्देश्य उन्हें श्रेष्ठ, सच्चरित्र और लौकिक जीवन में सफल बनाना था तो बालिकाओं की शिक्षा का उद्देश्य उन्हें उत्तम गृहिणी और श्रेष्ठ माता बनाना था। स्मृतिकालिक समाज में बाल-विवाह, पर्दाप्रथा व सतीप्रथा नहीं थी। वे उत्सवों व त्योहारों में सम्मिलित होती थीं। उनके घर से बाहर निकलने, घूमने-फिरने, आने-जाने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। स्मृतिकाल में धार्मिक कृत्यों, सामाजिक उत्सवों, समारोहों आदि में वे पुरुषों के साथ समान आसन ग्रहण करती थीं, उनकी नैतिकता एवं सदाचार का स्तर ऊँचा था श्रेयस्कर कार्य में तत्पर व सुंदर आचरण करने वाली स्त्री इस संसार में कीर्ति को पाती हैं—

पतिप्रियहिते युक्ता स्वाचारा विजितेन्द्रियां

सेह कीर्तिमवापनोति प्रेत्य चानुत्तमां गतिम् ॥²⁰

याज्ञवल्क्यस्मृति में समाज के प्रत्येक सदस्य के लिए नैतिक और सामाजिक दायित्वों की चर्चा की गई है। इसमें कहा गया है कि हर व्यक्ति का दायित्व है कि वह अपने कर्मों में न्याय, धर्म और सत्य का पालन करे। आज के समय में, समाज में नैतिकता और नागरिक दायित्वों को लेकर बढ़ते हुए विचार इसी प्रकार की अवधारणाओं पर आधारित हैं।

इस प्रकार से स्त्रियों को याज्ञवल्क्य स्मृति में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। यहां इस शोध पत्र में अन्य स्मृति एवं वैदिक साहित्य के समकालीन साहित्य को यथास्थान रेखांकित किया है। जिससे स्त्रियों की दशा का प्रायः पूर्ण ज्ञान सरलतापूर्वक हो जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- 1 याज्ञवल्क्य स्मृति— प्रो० एस०सी० विद्यार्णव पृ०—17
- 2 मनुस्मृति —2/9
- 3 मनुस्मृति —2/136
- 4 मनुस्मृति —12/104
- 5 मनुस्मृति —9/18
- 6 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/3
- 7 बद्धहारीति —3/6
- 8 भृगु स्मृति —3/40—43, 10/1—15 120
- 9 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/78
- 10 कौटिल्य अर्थशास्त्र द्वितीय अधिकरण —23/2
- 11 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/82
- 12 मनुस्मृति —2/66
- 13 मनुस्मृति —2/67
- 14 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/13
- 15 याज्ञवल्क्य स्मृति —62—67
- 16 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/83
- 17 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/61
- 18 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/63—64
- 19 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/85
- 20 याज्ञवल्क्य स्मृति —1/87